चालीस पारों वाला कुरआन

मौलाना सैय्यद मोहम्मद शाकिर नक़वी साहब क़िब्ला

कुरआन में तहरीफ यानी फेरबदल की बहस का सबसे मुख्य भाग ''चालीस'' पारों वाला कुरआन'' है। इसके देखने का सम्मान मुझे पहले 1962 ई० के आसपास मंगलौर ज़िला सहारनपुर में जनाब सैय्यद जव्वार हुसैन साहिब के पास मिला। जिस वक्त मुझे इसके बारे में बताया गया था तो मेरी कल्पना में अपने मौजूदा कुरआन से इस तथाकथित 40 पारों वाले कुर्आन का हजम दूने का था परन्तु जब अपनी आंखों से देखा तो अपनी सोच से बिल्कुल उल्टा पाया।

क्योंकि जो संग्रह मुझे जव्वार साहिब (अब मर्हूम) ने दिखाया वह सिर्फ दो सूरे थे एक ''नुरेन'' दूसरा ''विलायत'' (रमजानुल मुबारक का जमाना था) अच्छी खासी फुर्सत के साथ देखने का मौका मिला। सबसे पहला सवाल हजम को देख के जो मेरे मन में क़ायम हुआ वह यह था कि इस तरह बहुत से बहुत 32 पारे बन सकते हैं। चालीस पारों वाली बात तो फिर गलत की गलत रही फिर दुसरी बात जो उभर के सामने आयी वह यह थी जिसमें कि हमारा मौजूदा कुरआन जिसमें आयतों के इधर–उधर अगड़–पिछड़ जाने वाली तहरीफ के सब क़ाएल हैं। वह खल्त मल्त हो जाने के बावजूद बेरब्त और असंगत नहीं महसूस होता लेकिन यह दो सूरे जिनको निश्चय ही समय के खुर्द–बुर्द से बचा रहना चाहिए था जैसा कि इसके बारे में ''राज़दारी'' की बात की जाती है लेकिन यह सूरे मुझ सरीखे साधारण और अनपढ़ आदमी की नज़र में भी सर्वथा असंगत, बिल्कुल बेरब्त थे।

अब से लगभग 20–25 साल पहले अपनी अनभिज्ञता और लाइल्मी के बावजूद जो आनन्द अपने कुरआन में महसूस होता था, उस आनन्द का इसमें कहीं नाम निशान तक न था। हालांकि विश्वास और अक़ीदे के पक्षपात का तक़ाजा तो यह था कि मैं अहले–बैत(अ०) जिनकी मोहब्बत मेरे जीवन–मरण की एक मात्र पूंजी है की प्रशंसा के एक–एक वाक्य पर झूम–झूम पड़ता परन्तु प्रत्येक वाक्य स्वतः पुकार–पुकार कर कह रहा था कि यह अहले–बैत के चाहने वालों को बदनाम करने और कुरआन को विवादित बना देने के लिए यज़ीदी षड़यन्त्र है। बहरहाल मैंने वह नुसख़ा नागवार टिप्पड़ी के साथ सैय्यद ज़व्वार हुसैन जैनपुरी साहिब को वापस कर दिया।

फिर 1978–79 में कुरआन के नाम से प्रचलित यह संग्रह मैंने ''खुदा बख्श ओरियन्टल लाइब्रेरी'' पटना, बिहार में पाया। जहां मुझ से उसकी '' ज़ियारत'' की बारम्बार ख्वाहिश की गयी। लेकिन पुस्तकालय के कर्णधारों को मेरी इस प्रतिक्रिया पर अचरज हुआ क्योंकि न मैंने अपने व्यवहार के विपरीत वह संग्रह देखने से सख़्ती से इनकार कर दिया चूंकि मैं उस जमाने में (''उस्तुर्लाब'') वेधयन्त्र, पहले जमीन में उच्चता मापने का यन्त्र विशेष पर अपना कुछ निजी काम कर रहा था। इसलिये उन महानुभावों को मेरे इस अप्रत्याशित बर्ताव से काफ़ी तअज्जुब हुआ क्योंकि उन महानुभावों को यक़ीन था कि दूसरे लोगों की तरह मैं भी बड़ी ललक के साथ इसे देखने का शौक ज़ाहिर करूंगा लेकिन मेरे तिरस्कारपूर्ण व्यवहार से वह लोग मुझे आश्चर्य चकित हो के देखने लगे। चुनाचें उनमें सबसे ज़ियादा योग्य और बूढ़े सज्जन जिनके नाम का एक अंश हबीब था मुझसे पूछने लगे।

मैंने उन महानुभाव से निवेदन किया–

"चालीस पारों की रवायत पर तो पुरा विश्वास है लेकिन इस संग्रह को तो जअली समझता हूं। अल्लाह पर लांछन लगाने का जिसने भी यह अपराध किया है, उसका दुस्साहस उससे लेखा जोखा लिये बिना न छोड़ेगा।"

मेरा यह जवाब चूंकि उन सज्जनों की निगाह में पूरी तरह परस्पर विरोधी था। इसलिए वह सब मुझे अजीब अर्थ पूर्ण नज़रों से देखने लगे। मैंने बात को आगे बढ़ाते हुये निवेदन किया–

"जहां तक चालीस पारे वाले कुर्आन का सवाल है मेरी ही तरह खुद आप को भी इक़रार करना पड़ेगा कि अमीरूल मोमिनीन हज़रत अली बिन अबी तालिब (अ0) ने जो कुर्आन संकलित किया था वह चालीस पारों।"

मुझे उन बुजुर्ग का नाम याद नहीं रहा जिन्होंने लगभग उछलते हुये फरमाया कि "कि अरे हम 40 पारों का इक़रार करेंगे। मैंने निवेदन किया कि "क्यों नहीं मुझसे ही खुशी–खुशी मानेंगे।" चुनांचे सब सज्जन व्यंग्य पूर्ण हंसी हंस रहे थे।

मैंने सब को सम्बोधित करके सवाल किया, "हमारा मौजूदा कुरआन कितने पारों का है? जिसके जवाब में सभी मुस्करा के फरमाने लगे "कि तीस पारों का"। मैंने जवाब दिया कि जी नहीं! ऐसा नहीं है।" जाहिर है कि इसके जवाब में सब को एक ठहाका लगाना चाहिए था लेकिन सभी मुझे अचरज से देखने लगे जैसे वह मेरे मन को संदिग्ध निगाहों से टटोल रहे हों। मैंने फिर निवेदन किया, "कि यह हमारा कुरआन केवल तीस पारों का नहीं है बल्कि यह सात पारों का भी है और तीस पारों का भी जैसा कि कुरआन की हर प्रति में सात मंजिलें बाकायदा मौजूद हैं। अब आप खुद समझ गये होंगे कि इसकी आवश्यकता क्यों हुई कि कुरआन को तीस पारों का होते हुए सात पारों का बना लिया गया। ज़ाहिर है कि जो लोग इसको एक महीने में खत्म करते थे उनका कुरआन अनिवार्य रूप से तीस हिस्सों और उन्तीस हिस्सों पर समाप्त होता था। इसलिए उसके पाठ को सुव्यवस्थित रखने के लिए कुरआन के तीस पारे बना लिये गये। और जो लोग कुरआन को जुमा से प्रारम्भ करके जुमेरात को समाप्त करते थे और दूसरे जुमे से नया दौर शूरू करते थे यानी एक सप्ताह में कुरआन समाप्त कर लेते थे उनकी सुविधा के लिए कुरआन में सात पारे बना दिये गये। इसी तरह जो लोग चिल्लाकशी करते थे वह अपना यही कुरआन चालीस दिनों में खत्म किया करते थे। इसलिए उनका यही तीस पारों वाला कुर्आन चालीस पारों में तक़सीम हो जाता था, बंट जाता था। बिल्कुल उसी तरह आज भी कुछ लोग साल भर में कुर्आन का एक दौर पूरा करते हैं तो इसी कुर्आन को तीन सौ साठ पारों में बांट लिया करते हैं। बस इसी तरह चूंकि हज़रत अली (अ०) चिल्लाकशी के उन्वान से चालीस दिन में ख़त्म फर्माया करते थे तो अगर बराबर की मात्रा में तिलावत फर्माते रहे होंगे तो कुरआन चाहे–अनचाहे चालीस पारों में बंट गया होगा और इसी आधार पर यह बात फैल गयी होगी कि हज़रत अली (अ०) का कुरआन चीलीस पारों का था।

हम इस बुनियाद पर इस रवायत को और अधिक सहीह मानते हैं कि जब "तौरेत" के अवतरण के सिलसिले में कुरआन बताता है कि अल्लाह पाक महान ने हज़रत मूसा (अ०) को तीस रातों का वअदा करके बुलाया था और फिर इसमें दस रातों की बढ़ोत्तरी कर दी यानी तौरेत जिसे तीस खण्डों में उतरना था वह चालीस खण्डों में अवतरित हुई। हो सकता है कि जैसा कि कुरआन में फरमाया गया है "हमने तुम्हारे पास उसी तरह एक पैग़म्बर भेजा जैसा "फिरऔन" के पास भेजा था।[1] तो अगर इस कुरआनी आयत की रोशनी में यह सम्भावना मानी जाये कि हो सकता है कि कुरआन को भी चालीस

हिस्सों में बांट दिया गया हो तो इसमें अचरज नहीं होना चाहिए। कुरआन में इर्शाद हुआ है–

''और फिर हमने मूसा से तीस रातों का वअदा किया और उनको (दस की बढ़ोत्तरी) से पूरा किया बस पूरा हो गया मूसा के रब का मीक़ात (एक नियत समय या स्थान) चालीस रातों में और कहा मूसा ने अपने भाई हारून से तुम मेरे प्रतिनिध (खलीफा) बन जाओ मेरी जाति में और उनका सुधार करो और फसादियों का अनुसरण न करना।''(2)

इस आयत के भाष्य के क्रम में सभी जानते हैं कि तीस दिन पूरे होते ही सारी जाति सन्देह का शिकार हो गयी और सामरी ने तो मूसा की जाति का कबाड़ा कर दिया और शायद इसी ढ़ंग से अमीरूल मोमिनीन (अ०) ने चालीस की गिनती इख्तियार की होगी और इस पूरे कुरआन मजीद को चालीस हिस्सों में करके चालीस दिन में पूरा फरमाते होंगे हमें विश्वास है कि अल्लाह के नेक बन्दों में चिल्ले का दस्तूर भी इसी बुनियाद पर जारी हुआ होगा जो आज तक तअवीज में चल रहा है। यह न मानें तो चालीस का दर्शन समझ से एक दम बाहर हो जाये।

मेरे इस संक्षिप्त बयान से उन साहिबान ने जो असर लिया उसके चित्रण के लिए मेरे पास शब्द नहीं है। बहरहाल यह बात उन लोगों ने मानी और प्रत्येक व्यक्ति मानने पर मजबूर होगा कि चालीस पारों वालों वाली रिवायत का यह मतलब लेना बिल्कुल गलत है कि वर्तमान कुरआन के तीस पारों में दस की ओर वृद्धि कर दिये जाने के बाद चालीस पारों का कुरआन था बल्कि मतलब यही है कि यही हमारे हाथों में मौजूद कुरआन तीस के बजाये चालीस पारों में बांटा हुआ था जिसकी आयतों और सूरों के क्रम में, तरतीब में फर्क था लेकिन वह न तो इस कुरआन से कुछ ज़ियादा था न कुछ कम। यही हमारा विश्वास है और यही वस्तुस्थिति है।

अगर किसी मुसलमान को यह अधिकार है कि वह कुरआन को जब चाहे और जितने दिन में चाहें पूरा करें तो गोया प्रत्येक मुसलमान को यह छूट है कि वह कुरआन के हिस्से अपनी सुविधानुसार बांट ले तो यह छूट हज़रत अमीरूल मोनीन (अ०) के लिये क्यों नहीं! जिनके लिये रसूल (स०) का दिया हुआ यह प्रमाण मौजूद है कि ''अली कुरआन के साथ हैं।'' तो क्या उन्हें इतना अधिकार नही कि कुरआन को एक चिल्ले में पूरा किया करें। बहरहाल यह थी वह चालीस पारों की अस्ल हक़ीक़त जिसको इतना रंगीन बनाकर पेश करने की कोशिश की गयी है कि दो सूरे रच लिये गये ताकि मुसलमान कुरआन के बारे में भी आपस में मतभेद के शिकार हो जायें मगर अल्लाह का शुक्र है कि अहले–बैत के मानने वाले इस चाल में न आये। रह गयी ग़लत आरोप लगाने की बात तो उसका हाल अल्लाह पर छोड़ देना चाहिए।

1––सूरा 73 आयत 15, 2–सूरा 7 आयत 142

मदहे उम्मेकुलसूम स0 अ0

नदल हिन्दी

ज़ैनब की साथी कुलसूम
शह की बहेन अच्छी कुलसूम
अज़्मो हिम्मत की पैकर
हैदर की बेटी कुलसूम
सीरते ज़हरा की सूरत
अहमद की प्यारी कुलसूम
खान–ए–ग़म में रहती है
शाह की दुखियारी कुलसूम
जुल्म को बिस्मिल कर डाला
ऐसा हक़ बोली कुलसूम
फ़िक्रो अमल में बिल्कुल है
माँ सी, नानी सी कुलसूम
दरसे शहादत अब भी 'नदा'
हम को हैं देती कुलसूम

● ● ●